॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे प्रभु! मेरे में वह महानता और सत्ता दो, कि मैं इस यज्ञ वेदी को, यहाँ भी अपनाता जाऊँ और सूर्य लोक में जाऊँ तो वहाँ भी इसी प्रकार की वेदी उत्पन्न कर, संसार को ऊँचा बनाता चला जाऊँ। हे देव! आप कल्याण करने वाले हैं। मुझे वह सत्ता दो। यदि मुझे आज्ञा मिले तो मैं ध्रुव मण्डल तक जाऊँ तो वहाँ भी यज्ञ वेदी का प्रसार करूँ। हे प्रभु मेरा जीवन यज्ञमय हो।

हे प्रभु! हमें वह बल दो, वह सत्ता दो, जिससे विधाता! हम संसार रूपी महान् वेदी की रक्षा कर सकें, जिस वेदी पर नाना प्रकार के खरदूषण जैसे दैत्य आ जाते हैं। हे देव! यहाँ ताड़का जैसे राक्षस यज्ञ वेदी को भ्रष्ट करने आ रहे हैं। हे विधाता! मैं चाहता हूँ वह ताड़का, आज मेरे द्वारा न आए, वह खरदूषण मेरे द्वारा न आएँ। आज विश्वामित्र और राम जैसे आ करके हमारी रक्षा करें। आज हमें इस भगवान राम वाले सदाचार को अपनाना है जिससे यज्ञ वेदी की रक्षा होती है। दैत्यों को शान्त किया जाता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 530 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 605
वर्ष : 45 44 समग्र वर्ष : 51

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. संसार रूपी याग का स्वरूप	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-18
4. महान् चरित्र का दर्शन	पूज्यपाद-गुरुदेव एवम् महर्षि महानन्द मुनि जी	19-38
5. ऋषियों के उद्गार		39
6. दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		40-42

ऋग्वेद ब्रह्म पारायण याग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से पूज्यपाद-गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की सद्प्रेरणा एवम् आशीर्वाद से वैदिक अनुसन्धान समिति द्वारा प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी ऋग्वेद ब्रह्म पारायण याग का आयोजन आर्य समाज मालवीय नगर नई दिल्ली के प्रांगण में दिनाँक 9 दिसम्बर 2016 से 11 दिसम्बर 2016 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सभी अपने सम्बन्धियों, मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)

आप सभी को दीपावली की हार्दिक शुभ कामनाएँ

॥ ओ३म् ॥

संसार रूपी याग का स्वरूप

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि जो परमपिता परमात्मा वर्णनीय हैं प्रत्येक वेदमन्त्र उसका गान गा रहा है। जिस भी वेदमन्त्र के तुम गर्भ में प्रवेश करोगे उसी वेदमन्त्र में उस परमपिता का ज्ञान और विज्ञान निहित है। वेदमन्त्र उसका गान गा रहा है क्योंकि परमपिता परमात्मा का ज्ञान गाना और उसको गायन के स्वरूपों में दृष्टिपात करना यह बेटा! एक मानवीयत्व माना गया है क्योंकि गान गाने वाला गाता ही रहता है। जैसे माता का पुत्र माता का गान गाता ही रहता है। **गान का अभिप्राय यह है कि इसकी प्रतिभा को दर्शा रहा है।** उच्चारण कर रहा है कि यहाँ उसका कोई प्रतिनिधि है। इसी प्रकार इस पृथ्वी के ऊपर विचार-विनिमय करते हैं तो यह ब्रह्म की गाथा गा रही है, मानो यह ब्रह्माण्ड का वर्णन कर रही है कि वास्तव में कोई ब्रह्माण्ड है, कोई लोक है, परमात्मा का विज्ञानमयी जगत् है। तो मेरे पुत्रो! यह अपनी-अपनी आभा में आभायित हो रही है।

शब्द की रचना

वेदमन्त्र को विचारते हैं, चिन्तनीय विषय बनाते हैं तो मुनिवरो! वहाँ प्रभु का गान दृष्टिपात आता है। प्रत्येक वेदमन्त्र का जो शब्द है वह एक सूत्र में पिरोया हुआ है जैसे एक मानव के शरीर में हृदय

से उद्गार चलता है, हृदय में एक उद्गार आया और उस उद्गार का आकार बना और आकार बन करके तालु और रसना दोनों का जब समन्वय होता है तो शब्द की रचना बाहरीय जगत् में दृष्टिपात आती है। परन्तु शब्द की रचना हृदय में उद्गम हो गई थी। यदि चिन्तन करोगे तो शब्द की रचना तो हृदय से हो गयी, प्राणी के उद्बुद्ध करने की एक प्रतिभा मानव के हृदय में उत्पन्न हो गई। परन्तु जब तक बाहरीय स्वरूप में यह शब्द आता है तो उसका बेटा! कितना विचित्र एक आकार बन जाता है। शब्द ध्वनियों में निहित हो जाता है और शब्दार्थ के रूप में वह शब्द हमें दृष्टिपात आता है। विचार-विनिमय क्या? बेटा! तालु और रसना दोनों का जब तक समन्वय नहीं होता तो शब्द का आकार नहीं बनता। उसकी सूक्ष्म धाराएँ तो मानव के हृदय में उद्बुद्ध हो गई थीं। उसका बाहरीय स्वरूप बना तो आकार बन गया। वह जो शब्द है वह गान गा रहा है प्रभु की रचना का, प्रभु के विज्ञानमयी जगत् का गान गा रहा है।

यह ब्रह्माण्ड एक दूसरे का पूरक

मेरे पुत्रो! माता का पुत्र है, माता की ममता पुत्र को दर्शा रही है और पुत्र की ममता माता को दर्शा रही है। परन्तु एक दूसरा, एक दूसरे का पूरक बना हुआ है। माता जब ममतामयी बनती है तो पुत्र की रचना हो जाती है और जब तक पुत्र की रचना नहीं होती वह एक दूसरे के पूरक नहीं बन सकते और वह पुत्र गान गाने वाला है। गान क्या? वह परिक्रमा कर रहा है माता का वर्णन कर रहा है। जैसे यह पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कर रही है तो सूर्य का गान गा रही है, सूर्य को दर्शा रही है। इसी प्रकार माता का पुत्र माता का वर्णन कर रहा है। परन्तु यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। कैसे गा रही है? मेरे पुत्रो! सूर्य की नाना किरणें आयीं–धातु-पिपाद की रचना कर रही हैं। धातु बन रहा है। पृथ्वी गान गा रही है ब्रह्माण्ड का। वह क्यों गा रही है? क्योंकि पृथ्वी के गर्भ में जो नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ

उत्पन्न होता है उसको मानव पान करता है। उसका अन्नाद बना करके पान करता है। बेटा! उस अन्नाद में नाना औषधियों का सम्बन्ध नाना प्रकार की सूर्य की किरणों से होता है। किरणों का समन्वय लोक-लोकान्तरों से होता है, द्यौ-मण्डल से होता है। मेरे पुत्रो! जो पृथ्वी के अन्नाद को पान करता है वह बेटा! पृथ्वी ही के गान गाने वाला बने जो ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। जैसे प्रत्येक वेदमन्त्र ब्रह्म की गाथा गा रहा है। **माता की गाथा पुत्र गा रहा है और ब्रह्माण्ड की गाथा यह पृथ्वी गा रही है।** तो विचार-विनिमय क्या? एक-दूसरे का पूरक बना हुआ यह ब्रह्माण्ड, यह मानवत्व अपने में प्रकाशित हो रहा है।

आत्मतत्त्व

इससे पूर्व शब्दों में हम बेटा! तुम्हें आत्मा की विवेचना कर रहे थे। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने आत्मा के सम्बन्ध में अपना वाक्य प्रकट किया, अपना मन्तव्य उन्होंने प्रकट किया है वह उनका तथ्य है, उसको कोई भी मानव मिथ्या में ला नहीं सकता क्योंकि वह अपने में पूर्ण है। आत्मतत्व अपने में पूर्ण रहता है। उसको कोई मानव यह नहीं कह सकता, उसको मिथ्यावाद में ले जा नहीं सकता। मेरे प्यारे! वह अपने में पूर्ण है, इसलिए आत्मा को जानने का मानव को प्रयास करना चाहिए। क्योंकि आत्मा को पूर्णत्व में वह प्राणी जानता है जो बेटा! ज्ञानी है, वैज्ञानिक है, उसमें विवेक है। विवेकी बन करके, निर्भिमानी बन करके परमात्मा की गोद में यह मानव चला जाता है। विचार-विनिमय क्या? मेरे पुत्रो! मैं विशेषता में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ।

संसार क्या है

आजका हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था? वेद का आचार्य कहता है कि याज्ञिक बनना चाहिए। क्योंकि यहाँ प्रत्येक स्वरूपों में याग हो रहा है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है एक समय दार्शनिक व्यक्तियों का समाज एकत्रित हुआ। उन दार्शनिकों ने यह विचारा कि संसार क्या

है? इस संसार के सम्बन्ध में विचारक, दार्शनिक अपनी उड़ान उड़ने लगे। उन्होंने सबसे प्रथम यह प्रश्न किया कि संसार क्या है? तो वेद के आचार्यों ने कहा, दार्शनिकों ने कहा कि **संसार एक कल्पवृक्ष है**, यहाँ मानव जैसी भी कल्पना करता है, वैसा ही बन जाता है। द्वितीय ने कहा कि **यह संसार एक प्रकार की विचारशाला है,** यहाँ प्रत्येक मानव विचार-विनिमय करने के लिए आता है। तीसरे दार्शनिक ने कहा, नहीं **यह संसार एक प्रकार की विज्ञानशाला है,** यहाँ प्रत्येक मानव वैज्ञानिक बनने के लिए आया है, विज्ञान की उड़ान उड़ता रहता है। परन्तु चतुर्थ ने कहा नहीं, **यह संसार एक मृत-मण्डल है,** यहाँ संसार में मृत्यु को विजय करने के लिए आता है। परन्तु उसके पश्चात् दार्शनिक ने कहा कि यह जो संसार मुझे दृष्टिपात आ रहा है, नाना तरङ्गों वाला, नाना रूपों में यह जो दृष्टिपात आ रहा है, यह संसार ऐसा प्रतीत होता है जैसे **एक प्रकार की यज्ञशाला है,** यहाँ प्रत्येक मानव याज्ञिक बनने के लिए आया है, यागकर्म करने के लिए आया है। प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वह याज्ञिक बने। वेद का मन्त्र कहता है ''यागाम् ब्रह्मः सूर्य प्रवेः'' वेद का आचार्य कहता है सूर्य कैसा प्रिय याग कर रहा है? चन्द्रमा कैसा सुन्दर याग कर रहा है? मेरी प्यारी माता कितना सुन्दर याग कर रही है? यह संसार सब यज्ञशाला में विद्यमान है और विद्यमान हो करके सर्वत्र याग हो रहा है। मेरे प्यारे! जैसे मानव का सुगन्धि देना कर्त्तव्य है। मेरी प्यारी माता याग कर रही है। वह याज्ञिक बनी है। कैसा याग कर रही है? ऋषि-मुनि कहते हैं माता जब पुत्र याग करती है तो अपने में याज्ञिक बन जाती है।

माता मदालसा का याज्ञिक जीवन

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, माता मदालसा एक समय स्वेतकेतु ऋषि के आश्रम में विद्यमान थी। उन्होंने ऋषि से यह प्रश्न किया हे प्रभु! मैं ममतामयी बनूँगी परन्तु मैं याज्ञिक बनना चाहती हूँ। मैं याग कैसे करूँ? स्वेतकेतु ऋषि ने कहा हे देवी! तू याग करना चाहती

है तो **सुयोग्य सन्तान का होना ही तेरा याग है। वह पवित्र याग है।** यदि तू अपने गर्भ से एक धिराज को जन्म दे देती है और वह राजा कर्त्तव्यवादी बनता है, वह अश्वमेध और गो-मेध याज्ञिक बन जाता है तो हे पुत्री! तेरा जीवन याज्ञिक बन गया। विचार क्या? वेदी की आभा में रमण करने वाला ऋषि कहता है, हे मदालसा! तेरा जीवन महान! है। वह इतने वाक्य श्रवण करके वह मूल से, अंकुर से वृक्ष बनाना जानती थी। मेरे प्यारे! उसने अंकुरों से वृक्ष का निर्माण किया। कुछ समय के पश्चात् माता मदालसा के जब प्रथम पुत्र हुआ तो वह पुत्र से वार्ता प्रकट करती रहती थी। आत्मा से वार्ता प्रकट करती रहती थी और यह कहती थी कि निरन्जन आत्मा है शरीर में भास रहा है परन्तु यह जो संसार है इससे तुझे उपराम होना है। यह संसार विवेकी पुरूषों का है। माता मदालसा ऐसे शब्दों का उच्चारण आत्मीयता से करती रहती थी। तो मेरे प्यारे! जब यह बाल्य कुछ वाक्य उच्चारण करने लगा तो माता ने उसके हृदय को उज्ज्वल बना दिया। माता ने जब वह आत्मा गर्भस्थल में थी वह उस गर्भ में आत्मा से वार्ता प्रकट करती रहती थी। आत्मा का मिलान होता है, आत्मा से आत्मा का समन्वय होता है, **आत्मा से आत्मा की धाराओं का परिवर्तन हो जाता है।**

माता का आभूषण

मेरे प्यारे! वार्ता प्रकट करने में बाल्य कुछ प्रबल हुआ तो उस माता से प्रश्न करने वाला बालक, केवल तीन वर्ष का बाल्य माता से यह कहता है कि हे माता! माता का आभूषण क्या है? माता मदालसा कहती है कि **आभूषण माता का उसका चरित्र है।** परन्तु जब पुनः प्रश्न किया कि माता का आभूषण क्या है? तो यह कहती है मदालसा कि **माता का आभूषण माता की वाणी है, वाणी में पवित्रवाद होना चाहिए।** जब पुनः यह प्रश्न किया कि माता का आभूषण क्या है? तो वह कहती है कि **माता का आभूषण माता का पुत्र है।** मेरे प्यारे! पुत्र ने पुनः प्रश्न किया कि माता का आभूषण क्या है? तो माता कहती

है ''यागाम् ब्रह्मः वन प्रवे यागः'' **हे पुत्र! जो माता पुत्र को याग की तरह प्रदीप्त बना देती है, जो ज्ञान रूपी अग्नि पुत्र में प्रवेश कर देती है तो वह माता का पवित्र आभूषण माना गया है।** मेरे प्यारे! पुत्र ने पुनः कहा कि माता का आभूषण क्या है? वह प्रश्न करता ही रहा। माता मदालसा ने कहा हे बालक! हे ब्रह्मवर्चोसी! **माता का आभूषण वह है कि माता का पुत्र योगी बन जाए,** माता का पुत्र संसार के वैभव में रमण करने वाला न हो, माता का पुत्र योगेश्वर बन जाए, वह लोकों में अपनी उड़ान उड़ने वाला हो, वह आत्मा-परमात्मा से मिलान करने वाला हो, वह सर्वत्र राजाओं का भू बन जाए, धिराज बन करके रहे, वह माता का आभूषण माना गया है। मेरे प्यारे! पुनः जब प्रश्न किया कि हे माता! तू मेरी प्रिय माता है। परन्तु मैं यह पुनः उच्चारण करना चाहता हूँ कि माता का आभूषण क्या है? माता मदालसा कहती है ''सम्भवः वेदः ब्रह्माः लोकः'' हे बालक, हे ब्रह्मवर्चोसि! माता का आभूषण वह है जो **माता के पुत्र को मृत्यु का भय न रहे।** वह मृत्यु को अपने से दूरी कर दे। मृत्यु उसके आँगन में न रहे। उसमें अन्तर्द्वन्द्व न रहे। वह माता का पुत्र मानवीयत्त्व और निर्भयता दोनों को प्राप्त हो और वही माता का वास्तविक आभूषण है। मेरे प्यारे! बालक मौन हो गया। ब्रह्मवर्चो ने कहा हे माता! तू मेरी प्रिय माता है। तू ममत्त्व को धारण करने वाली, याज्ञिक है। वह माता मुनिवरो! याग कर रही थी।

माता का याग

पुनः ब्रह्मचारी वर्चोसि यह प्रश्न करने लगा कि माता का कौनसा याग है? मेरे प्यारे! मदालसा ने कहा कि माता का याग वह है जो माता अपने में जो शक्तियाँ हैं उन्हें एकत्रित करके हृदय रूपी यज्ञशाला में जो दुगदुगियों की आहुति देती है और माता उसके पश्चात् कर्त्तव्यवादी बन जाती है, संकीर्णता की आहुति दे देती है और बालक की पालना करती है, लोरियों को देती हुई उसे ब्रह्मज्ञान का उपदेश

दे रही है, उसे तेजोमयी बनाने के लिए प्रेरित कर रही है, वह माता का प्रिय याग है। वह बालक राष्ट्र का या किसी भी क्षेत्र में गमन करने वाला हो। माता ने उसको निर्माणित करके संसार को अर्पित कर दिया है, राष्ट्र को अर्पित कर दिया है, पृथ्वी माता को प्रदान कर दिया है। पृथ्वी माता उस पुत्र को अपने में धारण कर लेती है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है माता मदालसा के तीन पुत्र थे। शिलभ, प्रह्लाण और दालभ्य यह तीन पुत्र थे। परन्तु वह कितने ब्रह्मवेत्ता थे? वह सदैव ब्रह्म से वार्ता प्रकट करते रहते थे। पाँच वर्षीय ब्रह्मचारी होते ही माता से कहते हैं मातेश्वरी! अब आज्ञा दीजिए, आपने हमें याज्ञिक बना दिया, अब हम आध्यात्मिक याज्ञिक बन गए हैं। अब हमें आज्ञा दीजिए हम भयङ्कर वन में तपस्या करने जा रहे हैं। मेरे प्यारे! माता प्रसन्न हो गयी। माता कहती है कि यह मेरा कैसा अहोभाग्य है आज मैं कितनी सौभाग्यवती बन गयी हूँ, आज मेरा बाल्य ब्रह्म से वार्ता प्रकट करने जा रहा है, ब्रह्मचारी वर्चोसी बन करके ब्रह्मयाग करने जा रहा है आत्मीयत्व को जानने के लिए। माता उस समय प्रसन्न हो रही है। मेरे प्यारे! शिलभ, प्रह्लाण और दालभ्य तीनों भयङ्कर वन में जा करके संसार के विषय, वासनाओं का साकल्य बना करके काम, क्रोध लोभ, मोह इत्यादियों का साकल्य बना करके उसकी आहुति दे रहे हैं, ब्रह्मयाग कर रहे हैं। हृदय में उसको अर्पित कर रहे हैं और ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्म की उड़ान उड़ी जा रही है।

विचार क्या? मेरे पुत्रो! माता कितना प्रिय याग कर रही है। दार्शनिक कहता है यह जो संसार है यह एक प्रकार की यज्ञशाला है। मानव याग करने के लिए आया है। एक मानव अपने गृह में प्रातःकालीन अग्नि की पूजा कर रहा है। अग्नि होत्र कर रहा है। अग्नि होत्री बन करके अग्नि को उद्बुद्ध कर रहा है, उद्बुद्ध करता हुआ मेरे पुत्रो! प्रकाश में लाना है अपने को, अपनी आत्मा को उद्बुद्ध चेताने के लिए वह ''चैतन्य ब्रह्माणः'' चेताने के लिए अग्नि उद्बुद्ध हो जाती है। वास्तव में यह अग्नि

सन्निधान मात्र से ही सप्त जिह्वा वाली बन जाती है। कहीं काली बन जाती है, कहीं दुर्गे बन जाती है, कहीं यह सेलखण्डा बन जाती है, कहीं काचरानी बन जाती है, कहीं ब्रह्मचारिणी बन जाती है। यह सप्त जिह्वा वाली अग्नि यज्ञशाला में प्रदीप्त हो जाती है। मेरे प्यारे! यह देवी सम्पदा वाले देवी की पूजा करते रहते हैं। देवी की पूजा करनी चाहिए। देवी कौन है? मेरे प्यारे! कहीं वह देवी सरस्वती के रूप में रहती है, कहीं याज्ञिणी के रूप में रहती है, कहीं वह त्रिखण्डा बन कर रहती है, कहीं वह शक्ति रूप बन करके गति करती है। वह नाना रूपों में समाज का, मानव का कल्याण करती है। विचार-विनिमय क्या? मुनिवरो! वह देवी सम्पदा वाले देवी की पूजा करते हैं। मुझे स्मरण है बेटा! जैसे यह काल की आभा गति कर रही है, एक ऐसा काल बुद्धिमानों ने निकासा कि यागों का चलन होता रहा। मुनिवरो! कृषक इस पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करता है और स्थापना करके यह देवी की पूजा करता है। यह देवी क्या है? उसे कहीं प्रथा कहते हैं, कहीं चन्द्र घण्टा कहते हैं। उसकी उपासना उसके गर्भ में सुगन्धि भरण कर देता है, जागरूक बन करके सुगन्धि देता है। जिस समय वृष्टि हो जाए वह मेघ-मण्डलों की महानता की उत्पत्ति हो करके धीमी-धीमी वृष्टि हो करके यह पृथ्वी, यह माता बन करके यह सृष्टि जो याज्ञिक है यह तपती रहती है और तपाने के पश्चात् यह संसार को सुगन्धि देती है। यह संसार को अन्नाद प्रदान कर देती है तो मेरे पुत्रो! यह कितनी आभामयी गति करने वाली विचित्रवती मानी गयी है।

शुभ कर्म ही याग

विचार-विनिमय क्या? बेटा! मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। मुनिवरो! प्रत्येक मानव याज्ञिक बना हुआ है। मैं यागों की चर्चा कर रहा हूँ। मेरी प्यारी माता याग कर रही है। पुत्र माता की परिक्रमा कर रहा है। माता का गुणन कर रहा है, उसकी पूजा कर रहा है, याग कर रहा है। शुभ कर्मों का नामोकरण याग है। राजा अपनी प्रजा का पालन कर रहा है। राजा अपने राष्ट्र की प्रजा को

एकत्रित करके अश्वमेध याग करता है और अश्व नाम यही राजा को कहते हैं। मेघ नाम प्रजा का है। दोनों सुगठित हो करके राष्ट्र का कल्याण करते हैं, राष्ट्र को सुगन्धि देते हैं। राजा को राष्ट्र की जो सुगन्धि है, याग है। राजा के राष्ट्र का याग क्या है? राजा का चरित्र ही राजा का राष्ट्र है और वही चरित्र ही उसका याग है। मानो वह अश्वमेध याग कर रहा है।

श्रुतकेतु राजा का अश्वमेध याग

मुझे स्मरण है हमारे यहाँ एक समय श्रुतकेतु राजा थे। वह रघु वंश में थे। महाराजा सुखमंजस के महापिता थे और वह राजा महान् थे। उनके पुत्र का नाम सबरकेतु था। मेरे प्यारे! ऐसा मुझे स्मरण है कि उस राजा के मन में क्या आया कि मैं अश्वमेध याग करूँ। उन्होंने स्वर्ण से सुसज्जित करके एक अश्व को राष्ट्र में त्याग दिया और राष्ट्र में त्यागने के पश्चात् उसे किसी ने ग्रहण नहीं किया। जब ग्रहण नहीं किया तो राजा ने उस काल में प्रजा को एकत्रित करके एक दूसरे का कोई ऋणी तो नहीं है प्रजा में यह प्रश्न किया गया। मेरे प्यारे! प्रजा ने कहा भगवन् कोई ऋणी नहीं है। राजा ने प्रजा से कहा, तुम्हारे यहाँ पितृ-याग होता है? प्रजा ने कहा प्रभु! होता है। प्रजा से कहा क्या तुम देव-याग करते हो? प्रत्येक गृह में अग्निहोत्र होता है अथवा नहीं? मेरे प्यारे! प्रजा ने कहा भगवन्! जब आपका आदेश है, आचरण है, आपका राष्ट्रीय नियम बना हुआ है उसको कौन प्रजा ऐसी है जो उसको अपना नहीं सकती। मेरे प्यारे! राजा ने यह विचारा, मेरे राष्ट्र में कोई एक-दूसरे का ऋणी नहीं है। उन्होंने प्रजा को एकत्रित किया और अश्वमेध याग को रचाया क्योंकि संसार में दिग्विजय राजा बन गए थे नम्रता से। परन्तु राजा का नियम क्या था? वह कैसा याग करते थे? बेटा! प्रातःकालीन सूर्य उदय होने से पूर्व अपने आसन को त्यागना और त्याग करके पति-पत्नि अपनी क्रियाओं से निवृत हो करके अग्निहोत्र करना, देवताओं का आह्वान करना, देवयाग करना, ब्रह्म-चिन्तन

करना, उसके पश्चात् वह फिर से उद्योग करते थे। उनके के आँगन में एक सूक्ष्म सी भूमि प्रदा थी और उसमें मुनिवरो! अन्नाद को उत्पन्न करने का कर्म करते थे। उसके पश्चात् अपने राष्ट्र में भ्रमण करना, उस क्रिया में समाज को लाना, समाज के नियमों का पालन करना। मेरे प्यारे! वह राजा अश्वमेध याग कर सकता है जो इस प्रकार की नियमावली को धारण करता है। राजा ने अपने यहाँ वह याग किया। अश्वमेध याग जब किया प्रजा के सुखद के लिए, प्रजा के वैभव को संग्रह न करने वाला राजा और प्रजा को सुसज्जित बनाना, ज्ञान और विवेक में परणित करने का नाम, कर्त्तव्यवाद में लाने का नाम, स्वतः कर्त्तव्य में अपने को लाने का नाम बेटा! राजा अश्वमेध याग करता है।

अश्वमेध का अभिप्राय यह है कि मेधाः ब्रह्मणः प्रवेः वह कहते हैं कि मेरे राष्ट्र में मेधावी पुरुष होने चाहिएँ। मेधावी उसे कहते हैं जो अपने में विचित्र होते हैं। लोक-लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाले होते हैं। ज्ञान और विज्ञान को सुसज्जित रूप से धारण करते हुए अपने में महान बनते हुए प्रजा को ऊँचा बनाते हैं। विचार-विनिमय क्या? बेटा! राजा ने अश्वमेध याग किया। राजा अश्वमेध याग कर रहा है। वह याज्ञिक है। राजा प्रजा के सुखद के लिए अपने को तपस्वी बनाता है। अपने को याज्ञिक बनाता है और मुनिवरो! प्रजा को याज्ञिक बनाता है। प्रजा में ऋणी एक दूसरे का न रहना ही वही उसका महान् याग है। मुनिवरो! कैसे ऋणी रहता है? राष्ट्रीय जो नियमावली बनी हुई होती है कि मेरे राष्ट्र में यदि याग नहीं होता है तो सुगन्धि नहीं रहती। मेरे राष्ट्र में यदि एक-दूसरे का सहायक समाज नहीं है तो मेरा राष्ट्र जागरूक नहीं रहा है। यदि एक मानव दूसरे के भक्षण करने के लिए तत्पर है तो मैं उस प्रजा पर शासन करने योग्य नहीं हूँ। ऐसा जब नियम राजा अपने विचारों से जब नियमित करता है, उसको धारण कराता है प्रजा को वह प्रिय याग कर रहा है। कैसा याज्ञिक बना हुआ है। कैसा यागमय जीवन है राजा का। बेटा! इस प्रकार जब राजा अपने में सुसज्जित बन जाता

है तो प्रजा उससे पूर्व महत्ता को प्राप्त हो करके कर्त्तव्यवाद और याज्ञिक बनती है। **याग का अभिप्राय प्रायः है अपने में सुसज्जित होना, अपने को पवित्र बनाने का नाम याग माना गया है।**

संसार एक यज्ञशाला

आओ मेरे पुत्रो! मैं विशेष चर्चाएँ तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। मै व्याख्याता नहीं हूँ। केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ। विचार क्या? मुनिवरो! दार्शनिक ने कहा यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है। प्रत्येक मानव जब उसके ऊपर उड़ान उड़ता है कि यह संसार क्या है? यह ब्रह्माण्ड एक प्रकार की यज्ञशाला है। बेटा! यहाँ याग हो रहा है। जब विचारा जाता है कैसा प्रिय याग हो रहा है। जब मेरे प्यारे! यह पृथ्वी मण्डल एक लोक के रूप में रहता है। द्वितीय पृथ्वी एक लोक के रूप में रहती है। परन्तु इसको कौन चक्र में कौन याज्ञिक बना हुआ है बेटा? सूर्य की नाना प्रकार की किरणें, सूर्य की महान् शक्ति नाना पृथ्वियों को अपने में धारण कर रही है। नाना पृथ्वियों को धारण करके वह सूर्य याग कर रहा है। परन्तु वह जो द्यौ से सूर्य प्रकाश लेता है, वह द्यौ प्रकाश में सूर्य को लाता है तो वह सूर्य याग कर रहा है। वह वनस्पतियों को तपा रहा है, कामधेनु को तपा रहा है, माता को तपा रहा है, लोकों को तपा रहा है। तीस लाख पृथ्वियों को तपा रहा है। मेरे प्यारे! कैसा प्रिय याग कर रहा है? तप रहा है, तपा रहा है। सुगन्धित बना रहा है, तेजोमयी बना रहा है। उसको अपनी गतियाँ दे रहा है। वह कैसा प्रिय याग हो रहा है। वह कैसा महान् चक्रमयी याग हो रहा है। इसको मेरे प्यारे! अश्वमेध याग कहते हैं। अश्वमेध याग कैसे हो रहा है? परमात्मा जो अश्वमेध याग कर रहा है, समाज को सुसज्जित और प्रकाश में लाने के लिए प्रातःकालीन सूर्य उदय हो रहा है, प्रकाश दे रहा है, प्रकाशित बन रहा है। एक-एक कण में प्रकाशित हो रहा है। नाना पृथ्वियाँ प्रकाशित हो रही हैं और उस प्रकाश को ले करके मानव समाज प्रकाश में रत्त हो रहा है।

राजा सगर का अश्वमेध याग

विचार-विनिमय क्या? मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता। यहाँ पर अश्वमेध याग राजा सगर के पिता ने किया। राजा सगर जब अभिमान में परणित हो करके याग करने लगा। अश्वमेध याग करने लगा, उन्होंने जैसे अश्व को त्यागा स्वर्ण से लद करके, महर्षि कपिल ने उसे अपने आश्रम में कृत कर लिया, तो राजा सगर के नाना राजकीय राजकुमार सेनाएँ जब उसको ग्रहण करने के लिए गयीं, बेटा! कपिल मुनि के यहाँ अश्व प्राप्त हो गया। कपिल मुनि सदा विज्ञान में रत्त रहते थे, महाराजा कपिल ने उनको, सबको नष्ट कर दिया। परिणाम क्या? जो राजा अभिमान में आ करके, अयाज्ञिक बन करके अश्व-याग कर रहा है वह अपने को नष्ट कर रहा है।

याग के स्वरूप

मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ परिचय दे रहा हूँ और वह परिचय क्या है? कि राजा अपने में महान् बने, माता अपने में महान् बने। माता अपने पुत्र को महान् बना देती है, वह याग कर रही है। पृथ्वी खनिज दे रही है खाद्य दे रही है, याग हो रहा है। मानव एक-दूसरे से स्नेह कर रहा है, माता पुत्रेष्टि याग कर रही है। मेरे प्यारे! मेघ-मण्डलों से वृष्टि होती है तो वह याग कर रहे हैं। समुद्रों से तेजोमयी जलों का उत्थान हो रहा है, वह याग हो रहा है, वह सोम पिया जा रहा है। सोम को पान कर रहा है प्रत्येक प्राणी अणु-परमाणु बन रहा है। इससे मानव का जन-जीवन महान् बनता है।

आओ मेरे पुत्रो! मैं तुम्हें विशेषता में न ले जाता हुआ उच्चारण कर रहा था। मुनिवरो! एक दूसरे की मानव गाथा गा रहा है। विशुद्ध रूप से जब मानव अपने में गाथा गाता है तो यह याग कर रहा है। जैसे वेदमन्त्र प्रभु महिमा का वर्णन कर रहा है, देवताओं का आह्वान करता हुआ मानव याग कर रहा है। वेद वाक्य कहता है कि मुनिवरो!

एक-दूसरे की गाथा गाना, एक-दूसरे में पवित्रता लाना, एक-दूसरे को सहयोग में लाना, एक-दूसरे को कर्त्तव्य की भावना में लाना ही याग माना है। वह याज्ञिक पुरुष कहलाता है। बेटा! एक महापुरुष साधना में प्रवेश करता है तो वह प्राण को एक दूसरे में ला करके साधना कर रहा है। वह प्राण सूत्र का मिलान कराना चाहता है। वह उस योग में ही जाना चाहता है। जैसे वैज्ञानिक दो तरङ्गों का समन्वय करके यन्त्रों का निर्माण कर लेते हैं। परमाणुओं को सुगठित करके परमाणु शक्ति को संचित कर लेते हैं, शब्दों की आभा को ले करके विज्ञान में रमण करके यन्त्रों का निर्माण कर लेते हैं। शब्दावली यन्त्र बन जाते हैं। तो मेरे पुत्रो! कौन योगेश्वर महापुरुष याग कर रहे हैं? विचार-विनिमय क्या? मुनिवरो! प्रत्येक वेदमन्त्र प्रभु की गाथा गा रहा है। माता का पुत्र माता का वर्णन कर रहा है। मेरे प्यारे! सम्भवतः वह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। यह गाती रहती है पुत्रो! यह ममत्व को धारण होता रहता है।

आजका हमारा यह वाक्य क्या रहा है? यहाँ वेद के आचार्यों ने, ऋषि-मुनियों ने यह कहा है, दार्शनिकों ने कहा है बेटा! यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है। यहाँ प्रत्येक मानव याज्ञिक कर्म करने के लिए आया है, याज्ञिक बना हुआ है। माता अपने पुत्र को महान् जन्म दे रही है तो याग कर रही है। उस आभूषण को अपना रही है जिसको अपना करके यहाँ श्वेतकेतु, प्रह्लाण, शिलभ और दालभ्य को जन्म देने वाली माता, ऐसी सन्तान को जन्म देने वाली अपने में तप कर रही है। वह तपस्या में रत्त हो रही है। तप कर रही है। राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं कर रही है। राजा कहता है हे देवी! तू राष्ट्र का अन्न ग्रहण कर। कौशल्या कहती है कदापि नहीं। राष्ट्रीय अन्न रजोगुण, तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है। मैं उस अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी। माता के गर्भ से राष्ट्र का जन्म होना होगा तो माता कौशल्या अवश्य बनना होगा। मेरे प्यारे! माता कौशल्या राम को जन्म देने वाली थी, जो त्याग

में स्वयँ कला-कौशल करके, तप कर रही है, दार्शनिकता में रमण कर रही है। अपने को गायत्राणीं छन्दों में ले जा रही है। मेरे प्यारे! गर्भ में रहने वाला शिशु पनप रहा है, आनन्दवत् ज्ञान को प्राप्त कर रहा है, त्याग और तपस्यामयी बन रहा है। मेरे पुत्रो! प्रत्येक मानव को इस संसार रूपी याग को विचारना होगा। यह है बेटा! आजका वाक्य।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, एक दूसरे के ऋणी न रहते हुए, परमपिता परमात्मा के सुयाग को रचाते चले जाएँ। शेष चर्चा मैं बेटा! कल प्रकट करूँगा।

कल बेटा! मैं उद्दालक गोत्र के ऋषियों की चर्चा करूँगा। भिन्न-भिन्न उद्दालक गोत्रीय ऋषि अपने आश्रम में विचार करके याग की उड़ान रहे थे। कल तुम्हें मैं बेटा! उद्दालक गोत्रीय ऋषियों के समीप ले जाऊँगा। आजका वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा। इसके पश्चात् यह वार्ता समाप्त हो जाएगी।

वेदपाठ. . . . . .

अच्छा भगवन्! आज्ञा

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दिनाँक : 21 अक्टूबर, 1982

स्थान : श्री बैजनाथ अबरोल
पंजाबी बाग, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

महान् चरित्र का दर्शन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस यज्ञोमयी, आभामयी, श्रोत्रमयी, आनन्दमयी महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी है। यज्ञ जिसका आयतन माना गया है वह उसको नियमित कर रहा है, वह उसको गति दे रहा है, वह उसका गृह है। इस प्रकार सर्वत्र ब्रह्माण्ड उस मेरे देव परमपिता परमात्मा का आयतन माना गया है। जैसे मानव का शरीर उस आत्मा का गृह है वह उसे गति दे रहा है, वह उसका आयतन माना गया है, उसी की प्रतिभामयी कहलाता है। मेरे प्यारे! वह प्रभु यज्ञोमयी है। यागों का चलन बहुत ऊर्ध्वा में रहा है क्योंकि प्रत्येक प्राणीमात्र उस याग की आभा में सुगन्ध को पाते हुए, अपने को सुगन्धित बनाते हुए इस सँसार सागर से पार होने का प्रयास करता रहा है।

यज्ञों के विभिन्न स्वरूप

परन्तु आजका हमारा वेद का मन्त्र यज्ञों के नाना प्रकार, उनका ओजस्वी, तेजोमयी रूप का वर्णन कर रहा है। वेदमन्त्र में कोई ऐसा मन्त्र नहीं है जो परमपिता परमात्मा की महिमा से ओत-प्रोत न हो। क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र में भौतिकवाद, भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान निहित रहता है। क्योंकि **यह जो व्यवहारिक मानव का ज्ञान है यह मानव को पवित्र बना देता है।** परन्तु जब यह भौतिक विज्ञान

में गति करता है तो भौतिक अणु-परमाणुओं को एकत्रित करके यह नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण और राष्ट्र को शक्तिशाली बनाता है। परन्तु एक आध्यात्मिक विज्ञान है जो मेरे प्यारे! प्रत्येक मानव आध्यात्मिकवाद की कल्पना भी करता रहा है और ऊँची उड़ान भी उड़ता रहा है। आध्यात्मिक विवेचना हम नित्य-प्रति किया करते हैं। उस आध्यात्मिकवाद में मानव का एक ही लक्ष्य है कि मैं मृत्युञ्जय बन जाऊँ। मृत्युञ्जय बनने की कल्पना उसमें वह विश्वसनीय हो जाता है और यह चाहता है कि आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं जिसमें मानव को मृत्यु की इच्छा न रहे। मृत्यु से वह निडर हो जाए और परमपिता परमात्मा की छत्र-छाया में जाने के पश्चात् यह मानव मृत्यु से उपराम होता है।

परन्तु हमारा वेदमन्त्र यह कहता है हे याज्ञिक पुरुषों! तुम आध्यात्मिक, भौतिक और व्यवहार सबको जब तक उन्नत नहीं करोगे तब तक तुममें निर्भयता नहीं आएगी। तुम निर्भय बन ही नहीं सकते जब तक हे याज्ञिक पुरुषों तुम्हारे हृदय में इस सँसार को यज्ञ रूप में नहीं स्वीकार करोगे चाहे वह किसी भी प्रकार का याग क्यों न हो। जिसमें मानव अपने में अहिंसा में परणित होता हुआ अपने जीवन को महान् बनाता चला जाए। हिंसा का जो प्रारम्भ होता हैं, उसका जो जन्म होता है वह वाणी से होता है। **इसलिए याज्ञिक पुरुषों को कहा कि अपनी वाणी को महान् और पवित्र बनाओ।** हे याज्ञिक पुरुषो! तुम अपनी वाणी को उद्गारता में परणित कर दो, सत्यवादी बन करके और तुम अहिंसा परमो धर्मी बनो। तुम्हारा जीवन महान् बनेगा। परन्तु जब हिंसा उसके हृदय में वास कर जाती है तो जितने उसके हिंसक विचारधारा, आहार, व्यवहार वाणी मे कहता सब उसके जीवन को नारकीय बना देता हैं। तो **मानव को अपने ऊपर अनुसन्धान करना है, यही इस चरित्र की आभा में आता है।**

बेटा! इससे पूर्वकाल में हम यह प्रकट कर रहे थे कि हमारा चरित्र, जीवन ऊँचा होना चाहिए। राष्ट्र ऊँचा जब भी बनता है, जब विवेकी पुरुष, चरित्रवान मानव राजा के राष्ट्र में बुद्धिमान और व्यवहार में कुशल होते हैं। वह राष्ट्र की रक्षा किया करते हैं। समाज का जन-जीवन उनसे निर्माणित होता है। तो आज मैं विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, मेरे प्यारे महानन्द जी की बड़ी प्रेरणा रहती है, यह अपने उद्‌गार प्रकट करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। हम अपने वाक्यों को विराम देना चाहते हैं। अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्‌गार

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! आज यह हमारी आकाशवाणी जिस स्थल पर जा रही है वहाँ यागों का चयन और उनकी सम्पन्नता रही है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी कुछ यागों के सम्बन्ध में चर्चाएँ कर रहे थे, चरित्र के सम्बन्ध में विवेचना दे रहे थे। इनका नित्य-प्रति जो उद्‌गार प्रकट होता रहता है वह मानवीय समाज के लिए और राष्ट्र के उत्थान के लिए देते रहते हैं। जहाँ आता है प्रसंग आध्यात्मिकवाद का, आध्यात्मिक जो वाद है वह मानव की मौलिक सम्पदा कहलाती है परन्तु वह मौलिक सम्पदा इसलिए क्योंकि मानव अपनी अन्तरात्मा को जानना चाहता है। प्रत्येक मानव, प्रत्येक प्राणीमात्र सँसार का अपने अन्तःकरण में जब अपनी बाहरीय प्रवृत्तियों को ले जाता है तो उस काल में वह अपने अन्तरात्मा को जानना चाहता है। परन्तु कोई भी सँसार का प्राणी ऐसा नहीं है जिसे प्रकाश की इच्छा न हो। सदैव वह प्रकाश में अपने को गमन, अपने को स्थिर करना चाहता है। उसके हृदय में यही कामना होती है कि मेरा हृदय प्रकाशमयी हो। याज्ञिक याग कर रहा है, उसके मनों में यही कामना होती है कि मेरे जीवन में और मेरे गृह में नाना प्रकार का प्रकाश होना चाहिए।

प्राचीन वैज्ञानिक और आधुनिक वैज्ञानिक

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कुछ सँसार का परिचय कराया। आज भी मैं उस परिचय को देने के लिए आया हूँ। आज मैं प्राचीन वैज्ञानिकों के मध्य में जब मैं प्रवेश करता हूँ और उनके चरित्र, उनकी तपस्या जब मुझे स्मरण आता है हे पूज्यपाद आधुनिक काल का जो कार्य कर रहा वर्तमान में यह उससे निम्न प्रतीत होता है। उसके वाम मार्ग की आभा में मुझे प्रतीत होता है यह समाज। जब मैं अतीत के काल में प्रवेश करता हूँ तो मेरा हृदय यह कहता है कि चरित्र का वर्तमान काल में ह्रास होता जा रहा है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव चरित्र की कुछ चर्चाएँ कर रहे थे। आचार और व्यवहार की चर्चाएँ कर रहे हैं। आध्यात्मिकवाद की उसमें पुट लाते चले जाते हैं। परन्तु जब मैं आधुनिक जगत्, समाज और राष्ट्र को, दोनों को दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है। जब मैं धर्म के क्षेत्र में धार्मिक पुरुषों के गृहों में जाता हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है। परन्तु जब विज्ञान के क्षेत्र में पहुँचते हैं उनके आहार और व्यवहार पर हम दृष्टिपात करते है, उनका आन्तरिक जीवन में कुछ और बाहरीय जीवन कुछ बना हुआ है। इनका आहार और व्यवहार महान् दूषित हो रहा है। इसीलिए आधुनिक काल का जो विज्ञान है, एक-एक वस्तु को यह विचारता रहता है। उसका जीवन समाप्त होता चला गया। द्वितीय वैज्ञानिक उसके अनुसन्धान पर लग रहा है, उसने अनुसन्धान में एक धातु पिपाद को आज जाना। परन्तु द्वितीय काल आता है उसी धातु-पिपाद को वह दूसरे रूप में परणित कर देता है। ऐसा क्यों हो रहा है? एक वैज्ञानिक भविष्यवाणी कर रहा है। ग्रहों के क्षेत्रों में जा रहा है और वह ग्रह के क्षेत्रों में जा करके भविष्यवाणी कर रहा है। परन्तु यह भविष्यवाणी उनके अधूरेपन में परणित होती रहती है। वह जो उनका आकार है भविष्य वाला वह भविष्यवाणी उनके

नियन्त्रण में नहीं रह पाती। क्योंकि आभामयी जो जीवन की धाराएँ है अथवा जो नक्षत्रों से धाराओं का जन्म होता है, सूर्य की किरणें एक लोक में पहुँची। उस लोक में उस किरण के प्रभाव से उसका कोई विभाग जा करके द्वितीय मण्डल में जा गिरा। मण्डल में जब प्रवेश हुआ तो वह मण्डल अकृत बन गया। अपनी गति से मण्डल गतियाँ कर रहे हैं अपनी रेखा में, एक सूत्र में गतियाँ कर रहे हैं और वह गतियाँ करते-करते एक ही रूप धारण कर लेते हैं। परन्तु उस समय प्रकृति का, पृथ्वी का, प्रकृति के गर्भ में जितने मण्डल हैं चाहे वह यह पृथ्वी मण्डल हो, चाहे वह चन्द्रमा हो, चाहे वह मंगल हो, बुद्ध हो, शुक्र हो परन्तु कोई भी लोक-लोकान्तर हों, किन्हीं लोकों के जीवन ध्वस्त हो जाते हैं और किन्ही के जीवन ऊर्ध्वा में चले जाते हैं। कहीं नक्षत्रों का प्रभाव महानता में होता है। कहीं विनाशता में होता है। तो यह जो वैज्ञानिकों की धाराएँ हैं, परम्परागतों से वैज्ञानिक होते चले आए हैं सृष्टि के प्रारम्भ से अनगणित वैज्ञानिक हुए हैं जिनको हम गणना में नहीं ला सकते। इतने विशाल-विशाल वैज्ञानिक हुए हैं जो विज्ञान के रूपों में परणित थे।

प्रेरणाओं को ग्रहण करें

आजका यह विज्ञान, वाणी में अधूरापन क्यों हो रहा है? क्योंकि वैज्ञानिकों का आधुनिक काल में जो परमाणुवाद कहता है जो उनकी विचारधारा कहती है उसके अनुसार उनका आहार और व्यवहार नहीं रहा और उनके अनुसार आहार और व्यवहार न रहने पर वह अधूरे ही दृष्टिपात आते हैं उनमें संकीर्णता दृष्टिपात आती है। परन्तु उनका बाहरीय जीवन कुछ बना हुआ है और आन्तरिक जो जीवन है वह कुछ कह रहा है। एक परमाणुवादी विज्ञानवेत्ता यह कहता है कि गो-घृत में, गो-दुग्ध में वह शक्ति, वह परमाणु विद्यमान हैं जिससे मानव अपने में प्रकाशित बनता है। परन्तु उसका आहार और व्यवहार करने से,

अन्नाद को पान करने से, विशेष रूप से हिंसा नहीं होती। वह अहिंसा परमोधर्मी आहार को न करने से वैज्ञानिकता में संकीर्णता, अधूरापन आता जा रहा है। इसके मूल में क्या है? आहार और व्यवहार जो उनका विज्ञान कहता है, खनिज पदार्थों को जान करके जो उन्हें प्रेरणाएँ प्राप्त होती हैं उसके अनुसार उनका आहार, व्यवहार और क्रियाकलाप न रहने से मानव की आभा समाप्त होती जा रही है।

सूर्य उदय और अस्त होने के पश्चात् अन्तरिक्ष में लालिमा

उसी के मूल में है कि वैज्ञानिक जब अपने कथनानुसार जीवन को नहीं बनाते तो परिणाम यह होता है कि राष्ट्र में दूषितपन आ जाता है, राष्ट्र में दूषितपन आ करके और धर्म और रूढ़ियों में राष्ट्र परणित हो करके अग्नि के मुख में परणित हो जाता है। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रकट कराया था कि आधुनिक वर्तमान का जो काल चल रहा है, प्रातःकालीन और सायँकाल को सूर्य के उदय होने और सूर्य के अस्त होने के पश्चात् सूर्य के उदय होने से पूर्व एक लालिमा अन्तरिक्ष में अपना प्रकाश दे रही है। परन्तु वह जो लालिमा भ्रमण कर रही है उसके मूल में है समाज की विचारधारा। **समाज की विचारधाराओं से वायुमण्डल तो बनता ही है यह तो सार्वभौम एक सिद्धान्त है।** परन्तु वह जो लालिमा आ रही है उसमें एक बुद्ध और मङ्गल, रोहिणी और वशिष्ठ, अरुन्धति, सोमभूमिका, स्वेणकेतु, स्वाति और पुष्य, अचंग, स्वातिधन यह जो नक्षत्र है यह एक सीमा में आ रहे हैं। परन्तु यह जो सीमा में आ रहे हैं वर्तमान काल के वैज्ञानिकों में इसके ऊपर अनुसन्धान भी हो रहा है। अनुसन्धानवेत्ता अनुसन्धान भी कर रहे हैं। परन्तु नक्षत्रों की एक आभा बन गई है, वह लालिमा मैंने पूर्वकाल में पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया था कि अनावृष्टि और अति-वृष्टि के रूप में परणित होने वाला यह वायुमण्डल है। परन्तु इन लोकों का प्रभाव मङ्गल पर

विशेषकर उसमें धारा परणित हो रही है। मंगल मण्डल का जो समाज है वहाँ का प्राणीमात्र का जीवन भी अस्वस्थता में परणित हो रहा है। परन्तु इस पृथ्वी मण्डल का जो प्राणी है यह भी त्राहि-त्राहि कर रहा है।

अन्तरात्मा की आवाज को स्वीकार करें

इस आधुनिक पृथ्वी-मण्डल पर त्राहि का तो एक कारण है कि विज्ञान का दुरुपयोग होता जा रहा है। प्रत्येक प्राणी उस विज्ञान के दुरुपयोग को अपने में ग्रहण कर रहा है। अपने में ग्रहण करता-करता इसकी आवश्यकताएँ बलवती हो गयी हैं। यह अपने आहार और व्यवहार की पूर्ति करने के लिए भी यह जगत् उसे असम्भव सा दृष्टिपात आ रहा है। आज मैं यह कहूँ किसी प्राणी से आधुनिक काल इतना परतन्त्र बन गया अपनी इन्द्रियों का किसी प्राणी से मैं यह कहूँ कि हे मानव तू सुरापान न कर, तू दूसरे के रक्त को पान न कर तो वह कहता है कि यह प्राचीन वार्ताएँ हैं। आधुनिक काल में ऐसा कहाँ होता है? परन्तु जब यह उच्चारण करते हैं तो मेरा हृदय यह कहता है कि इस मानव का, पाप का उदय हो रहा है। अब क्योंकि वह मानव पुण्य के उदय को नहीं चाहता है उसके अन्तःकरण में वह जो पापास्थली बन गई है उसमें वह इतना ग्राही बन गया है कि वह अपनी त्रुटियों को त्यागना नहीं चहता। इसके मूल में यह है कि वह यह विचारता रहता है कि मैं ऐसा क्यों करूँ कि मुझे यह बाहरीय जगत् क्या कहेगा? परन्तु हे भोले मानव! जब तू अपनी मानवीय त्रुटि को ऊँचा बना लेगा, तू अपनी अन्तरात्मा से विचार। यह अन्तरात्मा क्या कहेगी? या बाहरीय जगत् को विचार रहा है। बाहरीय जगत् को विचारने से पूर्व तू अपनी अन्तरात्मा से जो प्रेरणा आ रही है, अन्तरात्मा जो तुझे यह कहता है, हे मानव! तू ऐसा कर्म न कर। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा था कि अपनी अन्तरात्मा

से मानव को (जो) अपने अन्तः हृदय में प्रवेश करता हुआ अपनी बाहरीय प्रवृत्तियों को आन्तरिक जगत् में ले जाता है तो उससे यह प्रतीत होता है कि मेरा अन्तरात्मा मुझे धिक्कार रहा है। जब मानव का अन्तरात्मा उसे धिक्कारता है शान्त मुद्रा होने पर हे भोले! तू अपनी अन्तरात्मा की आवाज को स्वीकार कर। वही तेरा मित्र है। वही शरीर में भात रहा है क्योंकि बाहरीय जगत् के प्रभाव में विशेष आने के पश्चात् तू अपनी त्रुटियों को नहीं विचार रहा है।

याज्ञिक पुरुष का जीवन

आज मैं जहाँ अपनी वार्ता प्रकट कर रहा हूँ वहाँ यह कि हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मैं प्रभु अनुपम से यह प्रार्थना करता रहता हूँ कि गृहों में शान्ति की स्थापना होनी चाहिए जिससे हे यजमान! तेरे जीवन का जो सौभाग्य है वह अखण्ड बना रहे क्योंकि याज्ञिक पुरुष ही सँसार में अपने जीवन को ऊँचा बना सकते हैं। अपने चरित्र की धाराओं से आहार और व्यवहार को ऊँचा बनाने से गृह शान्तिदायक बन करके महानता को प्राप्त हो जाएँ और कामनाओं की पूर्ति हो जाए। यह मेरी सदैव कामना रहती है। कामना के साथ मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ, मैं वैज्ञानिकों के मध्य में हूँ, कहीं शिक्षालयों के मध्य में हूँ कहीं विद्यालयों की आभाओं में गति कर रहा हूँ। परन्तु यह पृथ्वी मण्डल का प्राणी है यह इतनी दूषित आभा में गति कर रहा है, विज्ञान के दुरुपयोग होने के कारण कि यह मानव रक्तभरी क्रान्ति में परणित होना चाहता है। प्रत्येक मानव के हृदय में एक विचार धारा बन गई है कि प्राणी-प्राणी को अपने श्वास के साथ भक्षण करना चाहता है। यह क्यों करना चाहता है? क्योंकि विज्ञान का जो दुरुपयोग हो रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में वैज्ञानिकों की चर्चाएँ कीं और आधुनिक जगत् के वैज्ञानिक की मान्यता तो यह है। उनकी विचारधारा मैंने अभी प्रकट कराई है कि

परमाणुवाद उनका कुछ कह रहा है, विज्ञान की जो धाराएँ हैं वह कुछ उच्चारण कर रही हैं। उसके विपरीत कार्य हो रहा है। परन्तु जब वैज्ञानिक अपनी विचारधारा के अनुसार उसके विपरीत आचार और व्यवहार को बना लेगें तो विज्ञान का दुरुपयोग निश्चित हो जाएगा।

परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, देखो अतीत के जितने भी वैज्ञानिक हुए हैं उनकी कुछ चर्चाएँ किया करते हैं। महर्षि भारद्वाज का जीवन और यहाँ भगवान राम का जीवन, भगवान कृष्ण का जीवन और भी नाना ऋषि-मुनियों का जीवन कितना निर्भय था, जैसे महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज वैज्ञानिक थे। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपनी विज्ञानशाला में यन्त्रों से इस आकाश गङ्गा के सूर्यो की गणना करते रहते थे, निहारते रहते थे। अन्त में वह मौन हो जाते थे और तपस्या करते थे। समाधि में मुनिवरो! उस महान् विज्ञान को दृष्टिपात करते थे।

विज्ञान में सफलता का मार्ग

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है वह ऐसा है कि एक तरङ्ग को उसने जाना है, द्वितीय तरङ्ग प्रतीत हो गई है, तृतीय तरङ्ग प्रतीत हो गयी है उसी में उसका प्राणान्त हो जाता है। परन्तु उसे समाधिष्थ होने का अपनी अन्तरात्मा से या मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार को एक सूत्र में ला करके जब वह वैज्ञानिक तत्वों का अनुभव करता है कि तो वह विज्ञान उन ऋषि-मुनियों का सफल हो जाता है। आज मैं जब यह विचारता हूँ कि आधुनिक जगत् का जो वैज्ञानिक है एक अणु को, एक परमाणु को जानता हुआ, उसमें कितनी धाराओं का जन्म होता है इसमें वह शान्त हो जाता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आधुनिक जगत् में कुछ वैज्ञानिकों का ऐसा विश्लेषण चल रहा है। ऐसी उनकी विचारधारा है कि एक अणु एक परमाणु को हम विभाजन करना चाहते हैं। उसने विभाजन किया तो उसने अधूरेपन को तरङ्गों को जाना है।

परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! जब भूतकाल की वार्ताओं, अतीत के काल के ऋषियों की जैसा भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि, भगवान् राम, महाराज कुम्भकरण, स्वाति अश्वेत नाना ऋषिवर एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके उन्होंने एक परमाणु का जब विभाजन किया, वह विभक्त हुआ तो जितना यह ब्रह्माण्ड है यन्त्रों से उस एक ही परमाणु के विभाजन करने से सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण उसी एक परमाणु में दृष्टिपात आने लगा। तो ऋषियों ने यह कहा, उस काल में भारद्वाज इत्यादि ऋषियों ने कि इससे यह सिद्ध होता है जैसे हम पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना करते हैं और यह कहते हैं कि पिण्ड है तो ब्रह्माण्ड है, परन्तु यहाँ तो एक-एक परमाणु सृष्टि की गाथा गा रहा है और सृष्टि का वर्णन कर रहा है। ब्रह्माण्ड का चित्रण उसमें विद्यमान है। एक-एक परमाणु में ब्रह्माण्ड का चित्रण होता रहता है। परन्तु जब वैज्ञानिक इस वाक्य को विचारने लगते हैं तो प्रायः ऐसा सिद्ध होता है कि भारद्वाज मुनि महाराज के द्वारा एक कामधेनु गऊ थी। उस कामधेनु गऊ का दुग्ध का आहार करते थे। परन्तु कुछ अन्नाद को पान करते थे और वह अन्नाद एकत्रित करते रहते थे। अन्नाद जिस पर किसी का अधिकार न हो, उस अन्न को खरड़ बना करके उसका दुग्ध बना करके और गऊ के दुग्ध में उसको मिश्रण करके मुझे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी यह वर्णन कराया था एक सौ एक वर्ष तक भारद्वाज मुनि ने इस आहार को पान किया और वह कैसे वैज्ञानिक थे? यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उनका परिचय देते रहते हैं। इस प्रकार का आहार और व्यवहार जब प्राणी का बन जाता है ब्रह्मवर्चोसि बन जाता है तो वह मानव अपने विज्ञान में सफलता को प्राप्त करता है।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है, एक घोषणा कुछ ही काल हुआ है पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने वर्णन कराया था एक सूर्य ग्रहण हुआ।

सूर्य के आंगन में चन्द्रमा और पृथ्वी एक ही सूत्र में, एक ही धारा में वह परणित हो गए तो सूर्य ग्रहण की उत्पत्ति बनी। परन्तु वैज्ञानिक ने घोषणा की, सँसार के प्राणियों! तुम नेत्रहीन हो जाओगे, तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। परन्तु उन वैज्ञानिकों को यह नहीं दृष्टिपात आता कि जिस प्रभु ने सँसार की रचना की है उसी की धारा में वह जो आयतन है, ब्रह्माण्ड वह एक रेखा में आ रहे हैं जिससे तुम भविष्यवाणी क्या कर रहे हो? परन्तु उनमें अधूरापन दृष्टिपात आता है। इसके मूल में यह है कि उनके द्वारा तपस्या नहीं है, आत्मज्ञान नहीं है। आत्म-तपस्या न होने कारण वह तरङ्गो में अधूरेपन को प्राप्त हो रहे हैं।

ब्रह्मज्ञान के लिए प्रेरणा

आजका मानव आधुनिक जगत् का जो विज्ञान है वह नाना प्रकार के अणु और परमाणुओं को एकत्रित कर रहा है। उनको एकत्रित करता हुआ, एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को निगलना चाहता है। प्रजा में अशान्ति आ गई है। मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से बहुत पुरातन काल में जब यह प्रश्न किया तो पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि यह सँसार रक्तमयी क्रान्ति वाला है। इसके मूल में क्या है? कि राजा श्रेष्ठ न होने का कारण, राष्ट्र पवित्र न होने के कारण, राष्ट्र को ब्रह्मज्ञान न होने के कारण, राष्ट्र में तपस्या की हीनता के कारण, मानव सम्प्रदाओं की अग्नियों में परणित होता जा रहा है। वह जो नाना प्रकार के सम्प्रदाय हैं वह राष्ट्र के घात में लगे हुए हैं कि राष्ट्र को हमारी सम्प्रदाय का अधिकार हो जाए। इसके मूल में क्या है? कि राष्ट्र तपस्वी और ब्रह्मज्ञानी न होने के कारण ऐसा प्रायः हो रहा है। जब मैं यह विचारता हूँ पूर्वकाल के वैज्ञानिकों की और पूर्वकाल धिराजाओं की चर्चाएँ, राजा के राष्ट्र में एक धारा बनी हुई है कि ब्रह्मज्ञान होना चाहिए। ब्रह्मज्ञान में मानव के लिए लाभप्रद जो भी क्रियाकलाप है वह राजा के राष्ट्र में होने

चाहिएँ। राजा के राष्ट्र में जो नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं यह राष्ट्र को निर्जीव बनाती चली जा रही हैं। इसके मूल में मैं आज के राजाओं की चर्चा करता रहता हूँ। राजा का कर्त्तव्य है कि राष्ट्र में एक ही विचारधारा वाले प्राणी होने चाहिएँ। एक ही उनका वैदिक प्रकाश और ज्ञान वाला विचार रहना चाहिए।

धर्म का स्रोत

प्रत्येक मानव आज राष्ट्रों में धर्म के ऊपर प्राणी-प्राणी के रक्त का पिपासी बन रहा है। क्या उसको धर्म कह सकते हैं? **धर्म वह कहलाता है जहाँ एक मानव दूसरे मानव से स्नेह और इन्द्रियों से सुदृष्टि पान करने वाला प्राणी हो।** परन्तु जब मैं इन वाक्यों पर जाता हूँ तो इससे मुझे प्रतीत होता है कि राजा को विचित्र बन करके तपस्या करनी चाहिए। वनों में तपस्या करने के पश्चात् तपस्वियों का राष्ट्र होता है। जब मानव अपने धर्म का चिन्तन कर लेता है, मानवीय धर्म क्या है? कोई मानवीय धर्म कहता है कि द्वितीय राष्ट्रों से आ रहा है, कोई मानव आकाश मण्डल से कह रहा है। हे मानव! यह जो धर्म है यह मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित हो रहा है। इन्द्रियों में जैसे नेत्रों का धर्म है, सुदृष्टिपात करना, कुदृष्टिपात नहीं। देखो शब्द आ रहा है, शुद्ध और पवित्र शब्द है, सत्यवादी शब्द है वह श्रोत्रों में आ रहा है। मानव उस शब्द को ग्रहण करने वाला हो। वही श्रोत्रों का धर्म कहलाता है। वाणी उद्गार प्रकट कर रही है। वाणी जब तक सत्य उच्चारण कर रही है, अपने प्रभु का गान गा रही है जब तक मानव प्रसन्न रहता है। परन्तु जब मानव प्रकृति के क्षेत्र में आ करके दुष्टवाणी का प्रतिपादन होने लगता है मानव उससे ऊब जाता है, दूरी चला जाता है। इसी प्रकार त्वचा में जब तक प्रीति और प्रेम रहता है तब तक मानव प्रियता में रहता है। जब अप्रिय आगमन होने लगता है तब मानव उससे दूरी हो जाता है तो हे मानव! तेरी तो इन्द्रियों

में धर्म है। उस धर्म को कौन विचारता है, राजा विचारता है। राजा ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए, ब्रह्मनिष्ठ होना चाहिए। ब्रह्म का चिन्तन करने वाला जब तक राजा नहीं होगा, प्रजा महान् नहीं बनेगी क्योंकि प्रजा में एक उज्ज्वल कार्य रहना चाहिए।

विष्णु राष्ट्र

मुझे स्मरण आता रहता है, पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में वर्णन कराया, भगवान राम अपनी अयोध्या में विद्यमान हैं। विष्णु राष्ट्र की स्थापना करना चाहते हैं। विष्णु राजा कहलाता है। परन्तु विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का भी है। वह अपने राष्ट्र के कर्मचारियों से, राष्ट्र के नायकों से कहते हैं कि तुम्हारे प्रत्येक गृह में **मानव एक-दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए।** यह जब घोषणा राजा के राष्ट्र में होती है कि एक-दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए। वह ऋणी कौन है? जो प्रभु का चिन्तन नहीं करता वह प्रभु का ऋणी है। जो माता-पिता की सेवा नहीं करता वह माता-पिता का ऋणी है। समाज में अच्छाइयों को उत्पन्न नहीं करता वह समाज का ऋणी है। जो राष्ट्र के ऊँचे विचारों को स्वीकार नहीं करता वह राजा राष्ट्र का ऋणी होता है। इस प्रकार के ऋणों की उन्होंने गणना कराई और कहा कि राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं रहना चाहिए। राजा के राष्ट्र में यह घोषणा हो गई प्रत्येक गृह में ऊँचे विचारों के साथ गृह आश्रम में गर्हपत्य नाम की अग्नि की पूजा होनी चाहिए। गर्हपत्य नाम की अग्नि की पूजा क्या है? गृह में माता-पिता उस क्रियाकलाप को करें, उस उद्देश्य को प्रातःकाल बाल्यों को प्रदान करें जिससे बालक के हृदय में एक महानता की तरङ्गें आ जाएँ और वह उदण्ड न बने। वह विद्यालय में जाए तो ब्रह्मचारी सुगन्धियुक्त बना रहे। राष्ट्र में जाए तो राष्ट्र भी सुगन्धियुक्त रहे। इसी प्रकार एक दूसरा तब ऋणी नहीं रहेगा। प्रातःकालीन प्रत्येक गृह में सुगन्धि आती है, प्रत्येक गृह में याग होते हैं, वेदों की ध्वनियाँ

आती रहती हैं, उस राजा का राष्ट्र जब यह घोषित किया जाता है कि मेरे राष्ट्र में कोई भी दूषित प्राणी नहीं है तो वह विष्णु राष्ट्र कहलाता है। देखो! क्षत्रिय अपना क्रियाकलाप विशुद्ध रूप से कर रहे हैं।

परन्तु जब मैं आधुनिक काल के समाज में प्रवेश करता हूँ, जब मैं क्षत्रियों के क्षेत्र में जाता हूँ वहाँ भी जातिवाद प्रतीत हो रहा है, वहाँ भी सम्प्रदायवाद प्रतीत हो रहा है। राजाओं की गोष्ठियों में, जो राष्ट्र के नायक हैं वहाँ भी सम्प्रदायों का प्रसार हो रहा है परन्तु प्रभु का चिन्तन वहाँ नहीं होता। वहाँ केवल ऋणी क्या? वह स्वयँ ऋणी बने हुए हैं। जो ऋणी बने हुए हैं वह क्या कल्पना कर सकते हैं कि ऋण से उऋण होना है? मुझे स्मरण है यहाँ राजा प्रातःकालीन याग कर रहे हैं, ब्रह्म का चिन्तन कर रहें हैं। उसी प्रकार उनका समाज उसी क्रियाकलाप को करके राष्ट्र को पवित्र बना रहा है। अहा! आधुनिक जगत् जहाँ एक-दूसरा मानव यह घोषणा कर रहा है कि एकता के सूत्र में रहो, सम्प्रदाय को त्याग दो परन्तु जब वह एकान्त में विद्यमान होते हैं वह कहते हैं कि जब तक समाज के विचारों में भिन्नता नहीं आएगी, हम राष्ट्र पर शासन कैसे कर सकते हैं? हम इस स्थली को कैसे प्राप्त कर सकते हैं? यह उसी काल में प्राप्त होगी जब मानव के विचारों को एक सूत्र में लाना था वहाँ उसका विभाजन हो रहा है। जहाँ ब्रह्मज्ञान लाना था वहाँ विभक्त होने की चर्चाएँ आ रही हैं। अरे! भोले प्राणियों यह राष्ट्र कैसे ऊँचा बनेगा?

मैंने जब अपने पूज्यपाद से यह प्रश्न किया था कि महाराज! राष्ट्र कैसा होना चाहिए? तो पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा था कि विष्णु राष्ट्र होना चाहिए। **विष्णु राष्ट्र कैसा होता है?** राजा के राष्ट्र में चार नियमावली होनी चाहिएँ और चार नियमावली क्या कि राजा ही विष्णु है और उसकी चार भुजाएँ हैं। सबसे प्रथम उसकी **गदा** है और क्षत्रिय

पवित्र हैं। अपने बल से युक्त हैं और द्वितीय में **पद्म** है, चरित्र ऊँचा होना चाहिए। चरित्र कहते किसे हैं? चरित्र कहते हैं जो अन्तरात्मा से प्रेरणा प्राप्त होती है उसको स्वीकार करना और दुष्ट भावना को समाप्त करने का नाम चरित्र कहलाता है। अन्तरात्मा जिस मानव का दर्शा रहा है, अरे मानव! तू दूसरों का चरित्र हनन करना चाहता है। तू दूसरों का रक्तपान कर रहा है। तुझे कितने जन्म प्राप्त होंगे? ऐसा भी कल्पना करता है। यह तुझे भोगना भी है यह भी कल्पना कर। अन्तरात्मा से प्रेरणा प्राप्त हो रही हैं परन्तु वह जो स्वार्थ है, सम्प्रदायवाद है, विचाराधारा है, जातीयता है, उसके आँगन में आ करके अपनी अन्तरात्मा की वार्ता को शान्त कर देता है और वह अपने स्वार्थ की आभा में परणित हो जाता है। जहाँ मानव को ब्रह्मवेत्ता बनना था, ब्रह्म की चर्चा करनी थी, मन को सुसज्जित बनाना था, राष्ट्र को ऊँचे स्तर पर ले जाना था वहाँ निम्न बन गया है। अपनी आत्मा के विचारों में हीन बन गया है। वह बाहरीय समाज को क्या ऊर्ध्वा में पहुँचा सकेगा? परन्तु जब ऐसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया कि तृतीय में **चक्र** होना चाहिए। एक सँस्कृति होनी चाहिए। एक ही सँस्कृति एक ही विचारधारा जब मानव के समीप होती है तो राष्ट्र पवित्र बन जाता है। राष्ट्र में संग्राम नहीं होते। राष्ट्र में रक्तभरी क्रांतियाँ नहीं आती। रक्तभरी क्रान्तियाँ उस काल में आती हैं जब मानव के विचारों का विभाजन हो जाता है। उसके पश्चात् पूज्यपाद गुरुदेव कहते थे **शंख** ध्वनि होनी चाहिए। शंख ध्वनि उसे कहते हैं रेचक ध्वनि होनी चाहिए, ज्ञानी पुरुष होने चाहिएँ, विवेकी पुरुष होने चाहिएँ और पुरोहितों के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होना चाहिए। राष्ट्र का जो निर्माण है वह जब राजा का निर्माण अपठित समाज करेगा, वह राष्ट्र कदापि भी ऊँचा नहीं बन सकता। किसी भी काल में नहीं बनेगा। परन्तु राष्ट्र के राजा का निर्माण बुद्धिमान और विवेकी पुरुषों के द्वारा होना चाहिए। विवेकी पुरुषों के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होगा वह राजा महान् बनेगा,

कर्त्तव्यवादी बनेगा और ब्रह्मवेत्ता होगा। समाज उससे प्रभावित हो करके अपने कर्त्तव्य का पालन करेगा। जब अपठित समाज के द्वारा राष्ट्र का निर्माण होता है तो वह आधुनिक जगत् में इसी प्रकार अपठित समाज के द्वारा राष्ट्र का निर्माण हो रहा है और वह राजा कैसे बनते हैं? यह मैं नहीं उच्चारण कर सकता प्रभु! आपके समीप।

राष्ट्र का उद्धार

परन्तु मैं इतना उच्चारण कर रहा हूँ कि यह सँसार चरित्रवानों से ऊँचा बनना चाहिए और चरित्रवान वह होता है जिसे अपनी इन्द्रियों पर अनुशासन होता है। जो अपने शरीर रूपी राष्ट्र के ऊपर नियन्त्रण कर जाते हैं वह राष्ट्र को नियन्त्रित कर लेते हैं और जो राष्ट्र को नियन्त्रित कर लेते हैं वह ब्रह्मविद्या पर अपना आधिपत्य करते हैं और जो ब्रह्मविद्या को पान कर लेते हैं, वह विवेकी होते हैं। वह दूसरे के शृंगार को, वह दूसरे के द्रव्य को अपने में संग्रह करने की तत्पर नहीं होते। वह उदार बन करके, पवित्र बन करके इस सँसार सागर से ऊँचा कर्म करते हुए इससे पार हो जाते हैं।

वर्तमान काल

हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! आजका यह काल क्या कह रहा है? मैं उच्चारण कर रहा था वैज्ञानिकों की सभाओं में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो वहाँ भी अधूरापन, विद्यालयों में जब प्रवेश करता हूँ जहाँ चरित्रों का निर्माण होता है, जहाँ छात्रबल को दीक्षा दी जाती है परन्तु वहाँ भी मैं आहार और व्यवहार की अग्नि में विज्ञान का दुरुपयोग होता दृष्टिपात करता हूँ। अहा! समय आ रहा है। वह समय दूरी नहीं है पूज्यपाद! जब यहाँ एक मानव दूसरे मानव का भक्षण करने के लिए तत्पर हो जाएगा। प्रायः यह विचारधारा तो बनती ही जा रही है। परन्तु वह समय जब अग्नि प्रदीप्त हो जाएगी, अभी आन्तरिक अग्नि

धीमी-धीमी चल रही है। एक समय वह आएगा कि यह प्रचण्ड हो करके मानव-मानव का भक्षण करेगा। परन्तु विचार-विनिमय यह इस सम्बन्ध में, इसको तो प्रभु ही जानता है क्या होगा?

वर्तमान याग स्थली पर पूज्यपाद गुरुदेव कजली वनों से आते

परन्तु हे पूज्यपाद गुरुदेव! मैं आपसे यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है जिस स्थली पर वहाँ मानो ''यज्ञम् भवति ब्रह्मास्तेः'' वहाँ यागों का चलन परम्परागतों से रहा है जहाँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कजली वनों से आते थे परन्तु राजा, बड़े यजमान बड़े उत्साह से लाते थे। उसके विपरीत कर्म की गति बड़ी विचित्र होती है। परन्तु आज मैं इतना उच्चारण करना चाहता हूँ यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तेरे जीवन की धाराएँ और भी पवित्र बन जाएँ जिससे तेरी वाणी, तेरा आन्तरिक जगत् और तेरे जीवन की जो आन्तरिक धाराएँ हैं इनको पान करना है। इनको पान करता हुआ, दुग्ध होता हुआ अपनी मानवीयता को ऊँचा बना। यह है आजका वाक्य। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से क्षमा चाहता हूँ।

चरित्र को ऊँचा बनाने का मार्ग

विचार केवल यह कि आज मैंने आपको यह परिचय दिया है कि यह समाज, यह विज्ञान इसमें ऐसी अग्नि सी प्रदीप्त हो रही है कि उसको मैं आगे उच्चारण करने में असमर्थ रहता हूँ क्योंकि वह प्रभु का आयतन है। आज हमने प्रभु की महिमा का वर्णन किया है। हम नित्यप्रति इसकी चर्चा करते हैं परन्तु मेरा तो एक ही मन्तव्य है कि चरित्र तब ऊँचा बनेगा जब राजा ब्रह्मवेत्ता होगा। राष्ट्र ब्रह्म की चर्चा करने वाला होगा। समाज को जैसे जनक स्वयँ ब्रह्मयाग करते और वह प्रजा भी उनके यहाँ ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्म-चिन्तन करने वाली और जिस भी

काल में राजा यह दृष्टिपात करता है कि वायुमण्डल में अब अति-वृष्टि, अना-वृष्टि हो गई है उसी काल में राजा अपना क्रियाकलाप करते हुए अपने में जैसे राजा जनक ने स्वर्ण का हल बना करके, गऊ के बछड़ों को ले करके कृषकों को जागरूक किया था। जब उसके अनुसार राजा कर्म को करता है तो प्रजा उसी के अनुसार बरतने लगती है। ऐसे ही राष्ट्र का ऊँचा होना बहुत अनिवार्य है कि राजा महान् हो, उसका क्रियात्मक जीवन हो, दूसरे के वैभव को संग्रह करने वाला न हो। उसे स्वतः अपने में महान् और निष्ठित होना चाहिए। यह है आजका विचार, विष्णु राष्ट्र की कल्पनाएँ करते रहते हैं। यह आजका विचार समाप्त अब में अपने पूज्यपाद से आज्ञा पा रहा हूँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी ने अभी-अभी अपने कुछ उद्‌गार प्रकट किए। परन्तु उनके जो उद्‌गार हैं वह उद्‌गार कुछ ऐसे हैं–विडम्बनामयी हैं क्योंकि विडम्बनामयी जो वाक्य हैं यह समाज और राष्ट्र की कल्पना करते रहते हैं। चरित्र की वार्ता प्रकट करते रहते हैं।

चरित्र की मीमांसा

क्योंकि चरित्र की मीमांसा हमारे आचार्यों ने परम्परागतों से ही वेद के कुछ मन्त्रों का उच्चारण करते हुए कही और उन्होंने यह कहा कि मानव वह महान् बनता है जो अपनी अन्तरात्मा के अनुसार अपना कर्म करता है। इन्द्रियों पर अनुशासित होता है। अनुसन्धान वही प्राणी करता है जिसने अपनी इन्द्रियों पर अनुसन्धान किया है। ऐसा चरित्र की प्रतिभा में आता रहता है। मानव अपने में क्रियाशील रहे जैसे वायु गति कर रही है, अग्नि अपना प्रकाश दे रही है, जल परमाणु शीतलता दे रही है और पृथ्वी अपना गुरुत्त्व दे रही है। इन सबका मिलान जब समन्वय होता है तो नाना प्रकार के खनिजों को उत्पन्न करते हैं। जैसे

याज्ञिक याग कर रहा है वह अपने विचारों को अग्नि की धाराओं में परिवर्तित कर रहा है। उसका जो स्वाहा शब्द है वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह वायु की तरङ्गों में ओत-प्रोत हो रहा है। वही जो परमाणुवाद है वह अशुद्ध परमाणुओं को निगलता चला जाता है और शुद्ध और पवित्र अपनी प्रतिभा को वह उद्‌बुद्ध करता हुआ वायुमण्डल में ओत-प्रोत हो जाता है। तो इस प्रकार हमारे आचार्यों ने, ऋषि-मुनियों ने ऐसा कहा है।

अखण्ड जीवन

परन्तु रहा यह कि जैसा मेरे प्यारे महानन्द जी ने कहा कि जीवन अखण्ड बना रहे, जीवन प्रत्येक प्राणी का अखण्ड रहना चाहिए। अखण्ड जीवन उस काल में रहता है जब वह अपने में स्वर्णीय बनता है। आहार और व्यवहार जैसा अभी-अभी उच्चारण किया गया था आहार और व्यवहार पर जितना इन्द्रियों पर संयम होता है, इन्द्रियों की जितनी भी महानता रहती है, नियन्त्रण रहता है उतना ही उसके जीवन की धाराएँ पवित्र बनती रहती हैं और उतनी ही उसके जीवन की अखण्डता बनी रहती है। **अखण्डता का अभिप्राय यह है कि अपने मानवीय जीवन का कुछ अध्ययन करना। परन्तु मानव में वह उदीप्त रहना चाहिए, प्रकाशमान रहना चाहिए।** यह आजका विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि प्रत्येक मानव अपने में संयमी और चरित्र की धाराओं को अपने में चिन्तन करने वाला बने। जब आचार्य उसे शिक्षा देते हैं, आचार्य जब ब्रह्मचारी को शिक्षित बनाता है और वह कहता है ब्रह्मचारी! आज तुम जितनी शिक्षा विद्यालय की थी उसमें तुम पूर्ण हो गए हो उसे दीक्षित बनाता है, दीक्षा देता है। दीक्षा का अभिप्राय यह है कि अब तुम आचार्य बन गए हो, तुम्हारा आचार पवित्र हो गया है। **आचार्य का अभिप्राय**

है कि तुम्हारा जो आचार है, तुम्हारी जो जीवन की धाराएँ हैं वह पवित्र बन गई हैं। तुम आचार्य बन गए हो। तुम मेरे आश्रम को त्याग रहे हो। इन विचारों के साथ में क्रियात्मक जीवन पवित्रता में परणित हो जाए।

यजमान! तेरा जीवन सदैव अखण्ड बना रहे और तेरी महानता में पवित्रता आती रहे। यह आजका वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

वेदपाठ. . . . . .

अच्छा भगवन्! आज्ञा

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

दिनाँक : 7 अक्टूबर, 1982

स्थान : श्री बृजराज सिहँ
ग्राम खतौला, मुजफ्फरनगर

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. प्रकाश नाम सत्य को कहा गया है।
2. ऋषिजन् कहते हैं कि सत्य में ही महान् प्रभु रमण करने वाला होता है।
3. वेद नाम प्रकाश है। अन्धकार को त्यागकर प्रकाश वेफ मार्ग को जाना ही संसार में धर्म माना गया है।
4. वेद का वही उच्चारण करने का अधिकारी होता है जिसकी वाणी में सत्यता होती है।
5. वह जो सत्यवाद है वही उद्‌गम है वही आनन्द है आनन्द में ही रमण करने वाला है।
6. मानव को उद्‌गीत गाना चाहिए प्रभु का, अपने चरित्र और मानवता को ऊँचा बनाना चाहिए।
7. नाम गान का अभिप्राय है कि अपने को प्यारे प्रभु में तनमय करने का गान है, वह उद्‌गीत कहलाता गया है।
8. मन आत्मा के प्रकाश में उदय हो जाता है।
9. जो परमात्मा के राष्ट्र का वैज्ञानिक बन जाता है वह तो मुनि बन जाता है।
10. विचारों में एक वैदिकता होनी चाहिए, आर्यता होनी चाहिए।
11. दूसरे राष्ट्रों से प्रजा घृणा को लेकर आती परन्तु यहाँ के आर्य पुरुष उनको अपने में अपना लेते थे।
12. तू (मानव) घृणा की वेदी को मत अपना। घृणा से तेरे मानव जीवन का विनाश होता है, आवागमन की परम्परा बनती है।
13. राष्ट्र में आहार और व्यवहार को अशुद्ध मत करो तुम्हारा स्थान रहे या न रहे परन्तु प्रजा का चरित्र रहना चाहिए।
14. मानव को मानव से प्रीति होनी चाहिए, स्नेह होना चाहिए।

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	60.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	50.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएं	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
70.	ईश्वर मिलन	50.00
71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097117
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेदमन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है :-

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900

website : www.shringirishi.in

Email : contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

आओ आज हम उच्चारण करते चले जाएँ, कि वह देव की, जो अनुपम देन है वह जो अनुपम प्रकाश है, उसमें नाना प्रकार का ज्ञान और विज्ञान आता है और नाना प्रकार की प्रतिभा उसमें हमें विराजमान होती प्रतीत होती है। आज हम उस महान देव, वेदवाणी में ही, प्रभु की आनन्दमयी जो देन है उसका अनुवाद करते हुए, वेद का ऋषि कहता है आचार्य कहता है हे महा प्रभु! अकृते! तू वास्तव में हमारा कल्याण करने वाला है, जीवन को उदबुद्ध करने वाला है। तेरी ही महती, अनुपम कृपा से यह हमारा जीवन उदबुद्ध हो रहा है।

पूज्यपाद-गुरुदेव